जनवाचन आंदोलन

जनवाचन आंदोलन का मकसद है किताबों को गाँव-गाँव ले जाना, इन किताबों को नवपाठकों के बीच पढ़कर सुनाना और पढ़वाकर सुनना। गाँव की जनता के पास आज भी पढ़ने-लिखने के लिए स्तरीय किताबें नहीं हैं और जो हैं भी वे बेहद महँगी हैं। भारत ज्ञान विज्ञान समिति ग्रामीण जन तक कम कीमत और सरल भाषा में देशभर के मशहूर लेखकों की किताबें पहुँचाना चाहती है, ताकि गाँव-गाँव में जन वाचन, पढ़ाई और पुस्तकालय संस्कृति पैदा हो सके। संपूर्ण साक्षरता अभियान से जो नवपाठक निकलकर सामने आए हैं, वे अपने साक्षरता के अर्जित कौशल को बनाए रख सकें, उनके सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक चेतना का स्तर बढ़े और वे जागरूक होकर अपने बुनियादी हकों की लड़ाई के लिए लामबंद हो सकें, यह इस अभियान का प्राथमिक उद्देश्य है। भारतीय लोकतंत्र की रक्षा के लिए गाँव के लोग आगे आएँ, इसके लिए भी इस तरह की चेतना का विकास जरूरी है। साक्षरता केवल अक्षर सीखने का काम नहीं है, यह पूरी दुनिया के

भारत ज्ञान विज्ञान समिति

निन्यानबे का फेर

लेखक : गोपाल प्रसाद मुद्गल
अनुवाद : प्रमोद मलिक

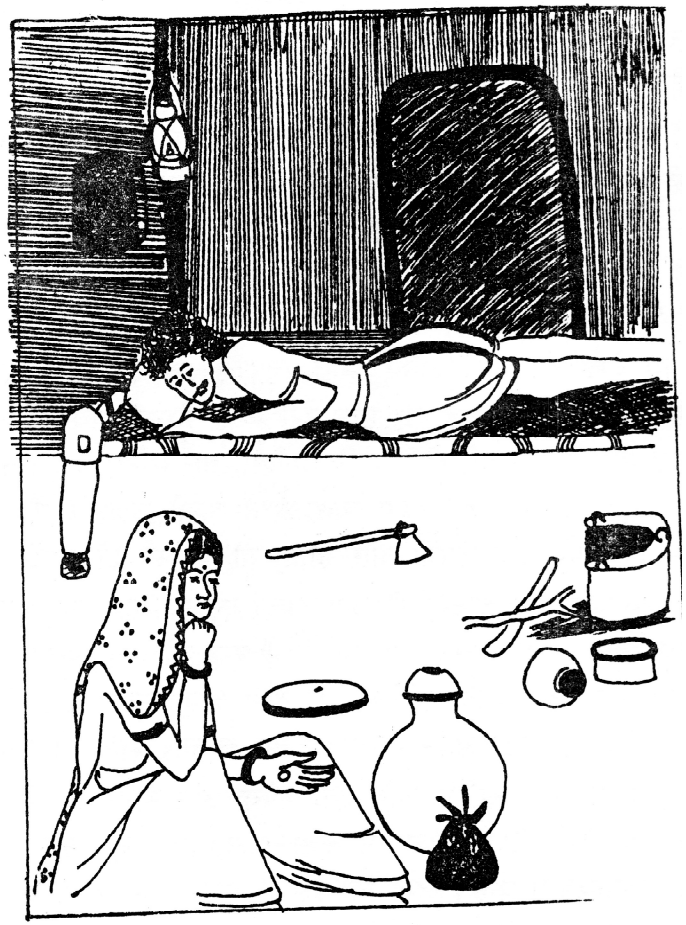

भारत ज्ञान विज्ञान समिति

निन्यानबे का फेर : गोपाल प्रसाद मुद्गल
Ninayanbe Ka Pher : Gopal Prasad Mudgal
अनुवाद : प्रमोद मलिक

नवपाठकों के लिए भारत ज्ञान विज्ञान समिति द्वारा प्रकाशित

© सर्वाधिकार सुरक्षित
भारत ज्ञान विज्ञान समिति

कार्यकारी संपादक : संजय कुमार
Executive Editor : Sanjay Kumar

रेखांकन : विभा
लेजर ग्राफि स : अभय कुमार झा

पुनर्मुद्रण : 2011

इस किताब का प्रकाशन भारत ज्ञान विज्ञान समिति द्वारा देशभर में चलाए जा रहे जन वाचन आंदोलन के तहत किया गया है ताकि लोगों में पढ़ने-लिखने की आदत पैदा हो सके। इस अभियान का मु य उद्देश्य पाठकों को सस्ती और सरल भाषा में देश के मशहूर रचनाकारों द्वारा लिखी गई उत्कृष्ट पुस्तकें उपल ध कराना है। खासकर उन नवसाक्षरों के लिए जो देशभर में चलाए गए संपूर्ण साक्षरता अभियान से निकलकर सामने आए हैं।

सहयोग राशि : 20 रुपये

Published by Bharat Gyan Vigyan Samiti.
Basement of YWA Hostel No. II, G-Block, Saket, New Delhi - 110017, Phone : 011 - 26569943, Fax : 91 - 011 - 26569773
Email: bgvs_delhi@yahoo.co.in, bgvsdelhi@gmail.com

निन्यानबे का फेर

गोपाल प्रसाद मुद्गल

एक लकड़हारा अपनी पत्नी के साथ झोपड़ी में रहता था। उसने झोपड़ी के चारों ओर कच्ची दीवार खींच रखी थी। चारदीवारी के भीतर एक नीम का पेड़ था।

लकड़हारा रोज जंगल जाता। लकड़ियां काटता। गट्ठर बांध कर लाता। गट्ठर को बाजार में एक आने में हाथों-हाथ बेच आता। जो कुछ मिलता उससे आटा-दाल खरीदता। उसी में गुड़ आदि खरीद लाता। लकड़हारे की पत्नी रोज उसका इंतजार करती।

लकड़हारे के आते ही घर में चूल्हा जलता। मोटी-मोटी रोटी सेंक कर उसका चूरा किया जाता और उसमें गुड़ मिलाया जाता। इस रोटी को आंगन में बैठ कर दोनों खाते। आपस के सुख-दुख की बातें करते। रोटी खाकर लकड़हारा नीम के पेड़ के नीचे चैन की नींद सो जाता। उसकी पत्नी घर के दूसरे कामों में लग जाती।

इस खेल को रोजाना एक सेठानी देखती। उसकी हवेली लकड़हारे की झोंपड़ी से सटी हुई थी। सेठानी मन ही मन सोचती कि हमसे लकड़हारा और उसकी पत्नी अधिक सुखी हैं। दिन-रात साथ रहते हैं। रोज चक्क माल खाते हैं। इन्हें किसी तरह की चिंता नहीं है। उधर हमारे सेठजी दिन उगते ही घर से चल देते हैं। देर रात घर आते हैं। रोटी खाते ही सो जाते हैं। हमसे बात तक नहीं करते। खाने के नाम पर हमें तेल के पराठे मिलते हैं।

वह लकड़हारे और उसकी पत्नी की सुख चैन की जिंदगी देखकर मन-ही-मन कुढ़ती रहती। आखिर वह कब तक मन में बात को पचाती! एक दिन उसने मन का दर्द सेठजी को बता ही दिया। सेठ ने सेठानी को समझाया कि यह लकड़हारा अब तक निन्यानबे के चक्कर में नहीं उलझा है। जिस दिन यह पड़ गया, सब कुछ भूल जायेगा। निन्यानबे के फेर की बात सुन कर सेठानी चकरा गयी। उसने पूछा, "भला यह निन्यानबे का फेर क्या होता है?" सेठजी ने लाख समझाया, "इसे मत पूछो। अपना नुकसान हो जायेगा।"

पर सेठानी हाथ धो कर पीछे पड़ गई। सेठजी ने कहा, "कल दोपहर में आऊंगा। तू निन्यानबे रुपये थैली में भर कर रखना।" सेठानी तुरंत तैयार हो गई।

थोड़ी देर में सेठानी ने बताया कि देखो, लकड़हारा और उसकी पत्नी चक्क माल खा रहे हैं। आपस में प्यार से बातें

कर रहे हैं। सेठजी हां-हूं करते सारा तमाशा देखते रहे। थोड़ी देर में लकड़हारा सो गया। खर्राटा भरने लगा। तभी सेठजी ने मौका पाकर रुपयों से भरी थैली नीचे फेंक दी।

चांदी के रुपयों से भरी थैली लकड़हारे के पास गिरी। खन्न की आवाज सुनकर लकड़हारा जाग गया। आवाज सुन उसकी पत्नी भी भागी हुई आई और उसने थैली उठाकर देखा—रुपये ही रुपये। दोनों बोले, "भगवान ने छप्पर फाड़कर रुपये भेजे हैं।" दोनों फूले नहीं समाए और रुपये गिनने लगे। इतने सारे रुपये देख दोनों की आंखें फटी रह गईं। उन्होंने बीस-बीस सिक्कों की ढेरी बनाई, पर एक ढेरी में उन्नीस सिक्के ही रह गए। एक बार गिना, दो बार गिना। बार-बार गिना। पर सिक्के एक कम सौ ही रहे। दोनों बात करते-करते उलझन में पड़ गए कि यदि एक रुपया और होता, तो पूरे सौ हो जाते।

अब समस्या यह आई कि इन रुपयों को आखिर कहां रखें? लकड़हारा कहने लगा कि मटके में रख लें। पर पत्नी का सुझाव था कि जमीन में गाड़ दें। इसी बातचीत में उन दोनों की नींद उड़ गई। यानि निन्यानबे का चक्कर शुरू हो गया।

लकड़हारा बोला कि यदि एक रुपया और होता तो पूरे सौ हो जाते। उसकी पत्नी ने भी कहा—बस, एक की कसर रह गई। लकड़हारा कहने लगा कि इसे मैं पूरा करके ही छोड़ूंगा। उधर सेठ यह तमाशा सेठानी को दिखाकर वापस दुकान पर चला गया। जाते-जाते यह कहता गया कि अब कल से देखकर बताना क्या-क्या होता है?

दूसरे दिन लकड़हारा जंगल मे लकड़ियां काटने गया। उसने लकड़ियां काटीं। बाजार में एक आने में बेची। आज वह घर

के लिए आटा-दाल कुछ नहीं लाया। उसने इकन्नी लाकर अपनी पत्नी को दी और उससे कहा कि इसे थैली में डाल दे। अब हमारे पास निन्यानबे रुपये एक आना हो गए। पत्नी ने राजी होकर थैली में इकन्नी डाल दी। पर उस दिन घर में चूल्हा नहीं जला। चक्क माल नहीं बना।

भूखा लकड़हारा खाट पर लेट गया। पर नींद नहीं आई। करवटें बदलता रहा पेट में चूहे कूद रहे थे। उधर सेठानी इस खेल को देख रही थी। यही हाल दूसरे दिन भी रहा, तीसरे दिन तो लकड़हारा खाट से उठ ही नहीं पाया। दो दिन का भूखा आखिर लकड़ियां काटने कैसे जाता! हाथ-पैर साथ नहीं दे रहे थे। उसकी पत्नी ने पूछा, "आज जंगल नहीं जाना क्या?" लकड़हारा अनमने मन से उठा। वह जंगल तो गया, पर वहां लकड़ियां नहीं काट पाया। भूख के मारे शरीर का हाल बेहाल था। लकड़हारा खाली हाथ वापस लौट आया। निन्यानबे को सौ करने के चक्कर में उसका जीना दूभर हो गया। सेठानी चुपचाप सबकुछ देखती रही।

रात को सेठजी घर लौटे। उन्होंने सेठानी से पूछा, "बता री परमेश्वरी, तेरे पड़ोसी का क्या हालचाल है?" भला सेठानी क्या कहती! सिर नीचे की ओर झुका लिया। उसने धीरे-धीरे पड़ोसियों का सारा कच्चा चिट्ठा सुनाया।

सेठजी ने कहा, "लकड़हारे के तो निन्यानबे में ही यह हाल है। हम तो लाखों में खेलते हैं। अब हमारा क्या हाल होगा, इसका अंदाजा लगा ले। खैर, तूने अपने निन्यानबे रुपये का आखिर नुकसान करा ही लिया।" सेठानी बोली, "पर अच्छा हुआ। मुझे समझ तो आ गई। अब मैंने अपनी आंखों से देख लिया कि यह निन्यानबे का फेर क्या होता है।"

❐❐❐

कल की कल देखी जाएगी

एक सेठ थे। नाम था दामोदर। खूब मालदार। घर में लक्ष्मी बरसती थी। अपार धन था। पैसा कहां से आता, कहां जाता– कोई ओर–छोर ही नहीं था।

एक दिन सेठजी ने मुनीम से पूछा, "मुनीमजी, जरा बताइये हमारे पास कितना धन है?" मुनीमजी बोले, "सेठजी, ऐसे कैसे बताएं? हिसाब–किताब लगाने में ही महीनों लग जाएंगे।" सेठजी बोले, "अजी तुम तो मोटा–मोटा हिसाब लगाकर अंदाज से ही बता दो।"

थोड़ी देर में मुनीमजी ने बताया, "सेठजी आपके पास अकूत धन है। हिसाब लगाना ही मुश्किल है। हां, इतना जरूर बता सकता हूं कि यदि आपके यहां इसी तरह खर्च होता रहा,

ऐसे ही शादी–ब्याह होते रहे, ऐसे ही दान–पुण्य होता रहा, इसी तरह हवेली के निर्माण पर खर्च होता रहा, तो यह धन बीस पीढ़ी तक चल सकता है।"

सेठजी ने बात सुनी और समझी। फिर वे मुनीमजी से बोले, "बस, बीस पीढ़ी तक का ही इंतजाम है? फिर इक्कीसवीं पीढ़ी का क्या होगा?"

मुनीमजी बोले, "सेठजी, मैंने तो अंदाज से ही बताया है। अब आप जानो और आपका काम जाने। इसका उत्तर मेरे पास नहीं है।"

यह सुनकर सेठजी का दिल बैठ गया। वह फफक–फफक कर रोने लगे। उन्हें जितना समझाया जाता, उतना ही अधिक रोते। घर जाकर उन्होंने खाट पकड़ ली। खाना–पीना सब छूट गया। उनकी नींद हराम हो गई। डाक्टर–वैद्य इलाज के लिए

आये, पर कोई बात नहीं बनी।

घर वाले परेशान। रिश्तेदारों का तांता लग गया। चार जाते-आठ आते। पर सेठजी का ले देकर वही दर्द कि मेरी इक्कीसवीं पीढ़ी का क्या होगा, इसका कोई जवाब दे।

सेठजी के घरवालों को किसी ने कुछ बताया, किसी ने कुछ समझाया। जिसने जैसा बताया, वैसा किया गया। तंत्र-मंत्र कराए गए। देवी-देवता मनाए गए। झाड़-फूंक कराया गया। पर नतीजा कुछ भी नहीं निकला। सेठजी की हालत खराब होती गयी। सेठजी लाइलाज हो गए।

सेठजी का एक लंगोटिया यार था संतोषीलाल। वह देशाटन के लिए गया हुआ था। बड़ा अलमस्त था। सेठजी से उसकी खूब घुटती थी। जब वह लौटकर आया तो उसने परम मित्र का किस्सा सुना। उससे रहा नहीं गया।

वह भागा हुआ दामोदर के पास पहुंचा। देखा, सेठजी पलंग पर पड़े करवटें बदल रहे हैं। लम्बी-लम्बी सांसें ले रहे हैं।

इक्कीसवीं पीढ़ी का क्या होगा? हाय राम, मेरी इक्कीसवीं पीढ़ी का क्या होगा? बस एक ही जाप चल रहा था।

संतोषीलाल को देखते ही दामोदर रोने लगा। उसकी हिचकी बंध गई। संतोषीलाल ने कहा, "अरे भले आदमी, जरा चुप तो लगा। बता तो सही कि आखिर बात क्या है?" "अरे भैया, मेरी इक्कीसवीं पीढ़ी का क्या होगा?" – रोते-रोते सेठ दामोदर बोला।

संतोषीलाल ने पूछा, "यह इक्कीसवीं पीढ़ी का क्या मामला है? जरा मुझे समझा तो सही।"

"अरे भइया, मैंने मुनीमजी से पूछा कि मेरे पास कितना धन है। मुनीमजी ने बताया कि बीस पीढ़ी तक का है। अब मुझे यह गम खाये जा रहा है कि इक्कीसवीं पीढ़ी का क्या होगा?" यह बात सुनते ही संतोषीलाल ने कहा, "अरे भाई, खूब कही। इसका उत्तर तो एक आदमी के पास है। नहीं मानते तो खुद जाकर पूछ ले।"

अपने मित्र का जवाब सुनते ही सेठ दामोदर के चेहरे पर चमक आ गई। वह पलंग से उठ बैठा और बोला, "बता भाई, वह कौन है? मैं अभी उसके पास जाऊंगा।"

"अरे हमारे नगर से बाहर वासुदेव पंडितजी हैं। वे तुरन्त बता देंगे।"

संतोषीलाल तो बता कर चल दिया। इधर दामोदर ने रथ तैयार किया। अपनी पत्नी से कहा, "चल, एक थाली में कुछ खाने-पीने का सामान रख ले। नगर से बाहर चलना है। वासुदेव पंडितजी से मिलकर आयेंगे।"

सेठ की बात सुनते ही उसकी पत्नी ने एक थाली में गेहूं का

आटा, गुड़, घी, दाल, नमक व मिर्च रख लिया। उधर रथ सज गया। थोड़ी ही देर में सेठ और सेठानी वासुदेव की कुटिया पर पहुंच गए। रथ को कुटिया के आगे नीम की छाया में खड़ा कर दिया गया।

वासुदेव की कुटिया में दो छप्पर थे। एक छप्पर बाहर था और दूसरा भीतर के हिस्से में। कुटिया के आगे वाला आंगन गोबर से लिपा हुआ था। एक तुलसी का गमला था। वासुदेव छप्पर के नीचे एक तख्त पर बैठे हुए थे। तख्त के पास आसन बिछा हुआ था।

सेठजी ने पंडितजी को आवाज लगाई। पंडितजी ने दोनों को अंदर छप्पर में बुलाया। पंडितजी नगर सेठ को अपने घर आया देखकर अचंभे में पड़ गए। पंडितजी ने सेठ-सेठानी को आशीर्वाद दिया। सेठानीजी ने पंडितजी के आगे सामान से भरी थाली रख दी। पंडितजी ने पंडितानी को आवाज लगाई। पंडितानी तुरंत पहुंची। पंडितजी ने उससे सामान की थाली ले जाने को कहा पंडितानी ने विनम्र भाव से उत्तर दिया, "भगवन, आज तो हमारे पास है। इसका हम क्या करेंगे?" पंडितानी की बात सुनकर सेठजी बोले, "आज है तो यह सामग्री कल काम आयेगी।"

पंडितानी ने जवाब दिया, "सेठजी कल की कल देखी जायेगी। आज तो हमारे पास है। आज जिनके पास नहीं है, उनको दो तो अधिक अच्छा रहेगा।" यह कहकर पंडितानी भीतर चली गई।

हां, पंडितानी की बात सेठजी के गले जरूर उतर गई। "कल की कल देखी जाएगी" , यह बात उनके दिमाग में घूमने लगी। वे सोचने लगे, "इन्हें कल की भी चिंता नहीं है

और मैं इक्कीसवीं पीढ़ी के लिए मरे जा रहा हूं।"

पंडितजी ने कहा, "सेठजी, इस थाली की सामग्री को रख लो। इसका सदुपयोग करो। और यह तो बताओ कि यहां आये कैसे? कोई बात पूछनी हो, तो पूछ लो।"

सेठ ने कहा, "नहीं पंडितजी, कुछ भी नहीं पूछना। मुझे तो मेरे सवाल का जवाब मिल गया।"

❐❐❐

मन चंगा तो कठौती में गंगा

पुराने जमाने की बात है। उस समय सभी जगह हाथी, घोड़ा, ऊंट आदि पर आना जाना होता था। रथ बहली और बैलगाड़ियों की भरमार थी। बारातों में उनकी धूम थी। उन दिनों पंडितों की भारी पूछ थी। जजमान उनकी बड़ी खातिर करते थे। पूरे मन से दान-दक्षिणा देते थे। इस तरह पंडितों का गुजारा अच्छा खासा चलता। हल्दी लगती ना फिटकरी, पर रंग चोखा आता।

उन दिनों पंडिताई का काम करने वाले एक पंडितजी थे। नाम था किशनो। बड़े सीधे-सादे, भोले-भाले, संत जैसे ब्राह्मण थे। सरस्वती तो उनके पास थी, पर लक्ष्मी पास नहीं फटकती थी। जैसे-तैसे घर का खर्चा चलता। उनकी बहू अनारो उन्हें उकसाती रहती, तब कहीं जाकर वह जजमान के पास जाते।

एक बार उनके घर में भारी तंगी आ गई। रोटी के लाले पड़ गए। अनारो ने अपने हथियार चलाए। वह किशनो पंडित के पीछे पड़ गई। उसने उनकी ताकत की याद दिलाई। उस नगर में बसंती डंगिया नाम का नामी जजमान रहता था। उसकी

अच्छी प्रतिष्ठा थी। अनारो ने अपने पति से कहा, "बसंती डंगिया को गंगा स्नान करा लाओ। अच्छी-खासी दान-दक्षिणा मिल जाएगी। घर का खर्चा चल जाएगा।" किशनो पंडित ने बहुत बार मना किया। उसे समझाया कि दूर के ढोल सुहावने दिखाई देते हैं। वह पैसे वाला तो है, पर है बड़ा काईयां। मैं डाल-डाल, तो वह पात-पात। पर त्रिया हठ के आगे पंडित को घुटने टेकने पड़े।

आखिर झक मारकर किशनो पंडित बसंती डंगिया के यहां पहुंचे। सेठ ने उन्हें लम्बी डंडोत दी। पंडितजी ने संस्कृत के मंत्र खूब पढ़े। ढेर सारा आशीर्वाद दिया। अब पंडितजी ने अपना हाथ फेरना शुरू किया। खूब खुशामदी बातें कीं। लल्लो-चप्पो की। सेठजी ने कहा, "पंडितजी अब असली मुद्दे की बात करो। आपने घर आने का कष्ट कैसे उठाया?"

पंडितजी बोले, "सेठ साहब, परसों सोमोतीमावस है। गंगा

स्नान का पर्व है। चाहो तो गंगा स्नान कर आयें।" सेठजी बात सुनते ही प्रसन्न हो गए। बोले, "पंडितजी, आपने बड़ी कृपा की। खूब याद दिलाई। गंगा स्नान का फल तो जरूर लेना चाहिए। फिर सोमोतीमावस का पर्व, एक पंथ दो काज हो जायेंगे। पर्व का पर्व और सैर की सैर। पर पंडितजी, यह बताओ कि कौन से वाहन से चलोगे।" पंडितजी तो थे भोले-भाले और हां में हां मिलाने वाले। बोले, "जिसमें आप राजी, उसमें हम राजी।" यह सुनकर सेठजी बोले, "हाथी पर चलना ठीक रहेगा।" पंडितजी उछल पड़े। हां में हां मिलाते हुए बोले, "आपने सही कहा हाथी एकदम ठीक रहेगा। सवारी की सवारी और दर्शन के दर्शन। पीठ खूब लम्बी चौड़ी। चाहो तो पलंग बिछा लो। सोते चले जाओ। इससे अच्छी और कौन सी सवारी होगी!" तभी सेठजी ने फरमाया, "पंडितजी, हाथी की सवारी ठीक है। पर एक खराबी है। हाथी बिगड़ जाए तो सवार को सूंड़ से पकड़कर नीचे फेंक डाले। पांव से कुचल दे।" पंडितजी ने फिर हां में हां मिलाई। बोले, "अजी मारो गोली। ऐसी सवारी का क्या काम! काला-कलूटा बिलाव जैसा! उसे खिलाने के लिए मन भर खाना कहां से लायेंगे!"

सेठजी बोले, "ऊंट ठीक रहेगा।" पंडितजी ने फिर हां में हां मिलाई। तारीफ के पुल बांध दिए, "वाह सेठजी! आपने तो मेरे मन की बात कह दी! ऊंट तो ऊंट ही है! रेगिस्तान का जहाज! ऊपर बैठो तो चारों तरफ के नजारे देखते चलो। खर्चा कुछ भी नहीं। ऊंट तो कंटीली झाडियां खाकर ही सब्र कर लेता है।" सेठजी ने लम्बी सांस छोड़ी। बोले, "पंडितजी, जब यह पागल हो जाए, तो मारे बिना नहीं छोड़ता।" पंडितजी ने पैंतरा बदला। बोले, "आपने सच कहा ऊंट भी कोई सवारी है!

लंबा डील डौल! कब्बदार पीठ! बैठना ही दूभर है! छोड़ो ऊंट को!"

सेठजी बोले, "रथ ले चलें।" पंडितजी ने कहा, "वाह सेठजी, यह आपने अच्छी बात सोची। रथ तो विष्णु भगवान की सवारी है। धीरे-धीरे सैर कराता हुआ ले जाएगा। पेट का पानी भी नहीं हिलेगा।" यहीं पर सेठजी ने रास्ता निकाल लिया। बोले, "कहीं टूट गया, तो सब गुड़ गोबर हो जायेगा। यात्रा अधूरी रह जाएगी।" पंडितजी ने नहले पर दहला लगाया। ज्ञान की पूरी पिटारी खोल डाली—"कहा बैलों को बांधेंगे? कहां दाने-पानी का इंतजाम करेंगे।"

इस तरह सेठजी सवारियों के बारे में सुझाते रहे। पंडितजी हां में हां मिलाते रहे। बात बनती और बिगड़ती रही। आखिर में सेठजी पदयात्रा पर आ गए। इसके लिए पंडितजी का रोम-रोम राजी हो गया। पंडितजी ने पदयात्रा का महत्व सबसे अधिक बताया। पांव चलने से तन भी ठीक रहता है और मन भी स्वस्थ रहेगा। धर्म का धर्म और कर्म का कर्म हो जाएगा। गंगा स्नान का पूरा लाभ मिलेगा।

यह सुनकर सेठजी ठंडे पड़ गए। बोले, "पंडितजी, पैदल चलेंगे, तो थक जायेंगे। पूरा बदन टूट जायेगा। शरीर को ऐसा दण्ड देने से क्या फायदा! हमारी समझ में तो एक ही बात आती है। घर में स्नान कर लिया जाए, तो अच्छा रहेगा। आप ही तो कहते हो, मन चंगा तो कठौती में गंगा।" यह सुनकर पंडितजी सन्न रह गए। वे फिर नहीं बोले।

❐❐❐

सबको राम राम

एक गांव में घोदूं-भोदूं रहते थे। दोनों सगे भाई थे। पर दोनों थे निरे मूर्ख। एक दिन की बात है। दोनों भाई घर के बाहर चबूतरे पर बैठे थे। एक रस्सी बांट रहा था। दूसरा नाश्ता कर रहा था।

उसी समय भिक्की भैंसवाला गली में दिखा। वह अपनी भैंसों को पानी पिलाने के लिए ले जा रहा था। उसने घोदूं-भोदूं को राम-राम की। उन दोनों ने राम-राम का जवाब दिया। भिक्की भैंसवाला आगे चल दिया। पर घोदूं-भोदूं आपस में लड़ने लगे। घोदूं बोला, "तूने राम-राम क्यों कही।"

भोदूं बोला, "तू कोई गीतन में गावे नहीं रौजन में रोवे नहीं। तुझसे कोई राम राम क्यों करेगा? भिक्की तो मुझसे राम राम करके गया है।"

"वाह भई वाह, पगड़ी आई मेरे लिए और रख ली अपने सिर पर", घोदूं ने कहा।

दोनों में तू-तू, मैं-मैं ज्यादा बढ़ गई। तभी उनकी पड़ोसन कर्पूरी भाभी आई और बोली, "देवताओ क्यों लड़ रहे हो? फटे बांस की तरह अपने गले को क्यों फाड़ रहे हो?"

घोदूं बोला, "भिक्की भैंसवाला मुझे राम-राम करके गया है। पर इसने राम-राम ले ली। अब जिद्द कर रहा है कि वह मेरे से राम-राम करके गया है।"

भोदूं बोला, "भाभी सच बात यह है कि वह मुझसे राम-राम करके गया है, और यह अपने लिए बता रहा है।" कर्पूरी ने कहा, "तो तुम किसलिए लड़ रहे हो? भिक्की से ही क्यों नहीं पूछ लेते कि उसने किसको राम-राम की है। जाओ भिक्की को बुलाकार लाओ।"

घोदूं भागता हुआ भिक्की को बुलाने पहुंचा। भिक्खी से कहा, "जरा भाई, घर तक चलो। हमारी भाभी बुला रही है।"

भिक्की कर्पूरी भाभी का नाम सुनते ही बोला, "क्या जमनापार वाली बुला रही है? जरूर चलूंगा। देवघट पर वह आंखों में काजल डालकर जब जिमाती है तो देखते ही बनता है। फूली पूरी, खीर साथ में, ऊपर से बूरा डालती है, तो खाने में आनन्द आ जाता है।"

घोदूं बोला, "अरे भइया, हमारी भाभी को नजर मत लगा देना।"

भिक्की ने कहा, "अरे लाला, ऐसा डर है तो उसे ताले में बंद करके रखो।"

इस तरह बात करते-करते दोनों घर पर आ गए। कर्पूरी ने पूछा, "अजी, तुम ऐसा क्या बीज बो गए कि दोनों जने आपस में लड़ रहे हैं?"

भिक्की बोला, "क्यों क्या हो गया? मैंने तो कुछ भी नहीं कहा।"

कर्पूरी बोली, "अजी, तुम राम-राम कर के गए थे। अब दोनों जने लड़ रहे हैं। एक कह रहा है—मुझे राम-राम कह कर गया है। दूसरा कह रहा है—मुझे राम-राम कह कर गया है। अब तुम्हीं बताओ कि किसे राम-राम कह कर गए थे?"

भिक्की बड़े चक्कर में आ गया। किसके लिए कहता! किसको नाराज करता! उसने गेंद उनके ही पाले में डाल दी। बोला, "मैं तो मूर्ख को राम-राम करके गया था।"

यह बात सुनकर दोनों तुरंत बोल पड़े—मैं मूर्ख हूं। मैं मूर्ख हूं।

कर्पूरी बोली, "अब इसका निर्णय कैसे हो?" भिक्की बोला, "ये खुद तय करें कि बड़ा मूर्ख कौन है?"

घोदूं ने अपनी मूर्खता का किस्सा सुनाना शुरू किया— मैं जब ससुराल जाता, तभी सास मेरे से लड़ती। मुझसे कहती, सजसंवर कर दिन में आया करो, जिससे मालूम पड़े कि किसी के यहां मेहमान आया है। यह बात मुझे चुभ गई। एक दिन मैं साले के लड़के के नामकरण समारोह में ससुराल गया। गोपी सरपंच का घोड़ा ले गया। किसी से और सामान उधार ले गया।

सजसंवर कर ससुराल तक पहुंच गया, पर रात हो गई। तभी मुझे सास की बात याद आ गई कि सजसंवर कर दिन में आया

करो। मैंने सोचा, क्या किया जाए। मैं गांव के बाहर बाबाजी के मंदिर में ठहर गया। बाबाजी से जान-पहचान थी। अब मुझे लगी भूख! उधर ससुराल में बाजे बज रहे थे, इधर मेरे पेट में चूहे कूद रहे थे। मैंने अपना सामान बाबाजी के पास रखा और भेष बदल कर जा पहुंचा ससुराल के दरवाजे पर। वहां जीमने वालों की पंगत में जाकर बैठ गया। पत्तलों पर चावल-बूरा आ गया। एक आदमी लालटेन लेकर यह देख रहा था कि किसके पास क्या-क्या सामान आ गया है? मैं रोशनी से बचना चाह रहा था। पीछे की तरफ खिसकने लगा। जब लालटेन वाला और पास आया तो मैं और पीछे खिसका। पीछे एक गड्ढा था। मैं उसमें गिर गया। गड्ढे में चावल का मांड भरा हुआ था। लोगबाग हल्ला मचाने लगे। अरे भाई, आदमी गिर गया। उन्होंने मुझे गड्ढे से बाहर निकाला। मेरे चेहरे की ओर देखकर बोले कि यह तो हमारे मेहमान हैं। मुझे वह उल्टा-सीधा कहने लगे। मैंने कहा, ज्यादा ची-चपड़ तो करो मत। मेरी गलती नहीं है। सासजी ने कहा था कि जब भी आओ दिन में सजसंवर कर आया करो। मैं आया तो सजसंवर कर ही, पर हो गई रात। इसी वजह से बगीची पर उतर गया। सारे सामान को उतार कर बाबाजी के पास रख आया। मुझे भूख लगी तो भेष बदल कर आया। सबेरे आता, तो संवर कर आता। मेरी इसमें क्या गलती है?

तो ससुराल वाले बोले, "अरे मेहमान तू तो बड़ा मूर्ख है। तूने यह क्या किया?"

इस तरह मैंने ससुराल से मूर्खता का पट्टा प्राप्त किया है। इसलिए यह राम-राम मुझे ही की गई।

भोदूं बोला—अब मेरी राम कहानी सुन लो। मेरी बहू को बच्चा होने वाला था। वह पीहर मिलने गई। वहीं उसका लड़का हो गया। अब मैंने सोचा—लड़का यहां होता तो ससुरालवाले छूछक लेकर आते। पर लड़का वहां हुआ तो अब मुझे छूछक लेकर जाना चाहिए।

मैंने छूछक की तैयारी की। ससुर के लिए पगड़ी और धोती। सास के लिए लंहगा-ओढ़नी। सालों के लिए कुर्ता-धोती। अपने लड़के के लिए कुर्ता-टोपी। हाथ के लिए कड़ा। गले में जंजीर। सारा सामान इकट्ठा कर मैं छूछक लेकर चला। अपने संगी-साथियों से भी चलने को कहा किंतु कोई साथ नहीं चला। मैंने पोटली अपने सिर पर रखी और चल दिया ससुराल

की ओर। वहां पहुंचा तो ससुराल वालों ने पूछा, "मेहमान, पोटली में क्या लाये हो?" मैंने कहा, "छूछक।" यह बात सुनकर सब हंसने लगे। मैंने पोटली खोलकर दिखाई। ब्योरेवार सबको समझाया। सब हंसते रहे। आखिर में सब बोले, "मेहमान, तू तो बड़ा मूर्ख है। अरे लड़का-लड़की कहीं भी पैदा हो, छूछक तो लड़की के पीहर वालों का होता है।" अब बताओ, मैं हूं न, बड़ा मूर्ख। राम-राम भिक्की ने मुझे की।

कर्पूरी ने दोनों की कथा सुनी। बोली, "बताओ देवरजी, किसे राम-राम की है?"

भिक्की बोला, "मैंने दोनों को राम-राम किया। ये दोनों मूर्ख हैं। इन्हें इतना भी नहीं पता कि जहां चार-पांच आदमी बैठे होते हैं, वहां राम-राम सभी को की जाती है।"

❐❐❐

बोली का रस

एक थी बुढ़िया। उसका एक लड़का था घूरे। वह कुछ भी कामकाज नहीं करता था। बुढ़िया चरखा कातती। खेत-खलिहान पर मजदूरी करती। तब कहीं जाकर पेट भरता। उसने अपने बेटे को समझाया-बुझाया, "बेटा, ऐसे कब तक काम चलेगा? मैं आज हूं। कल मैं नहीं रही, तो तू क्या करेगा? कैसे पेट भरेगा?"

घूरे अपनी मां की बात सुनता। पर उसके कानों पर जूं तक नहीं रेंगती। बुढ़िया बहुत परेशान थी। मन-ही-मन घुटती रहती। घूरे को बहुत भला-बुरा सुनाती। पर जिसने ओढ़ ली लोई, उसका क्या करेगा कोई? उसका पेट भरा नहीं कि वह मटरगश्ती के लिए निकल पड़ता। कहीं ताश पर बैठ जाता, तो कहीं शतरंज पर। उसने सोच रखा था-

जिसके जियें माई-बाप ।
रोटी देंगे अपने आप ।।

घूरे का बाप नहीं था। उसने तो मां को ही मां-बाप समझ रखा था। मां आखिर क्या करती! वह उसे घर से बाहर तो निकाल नहीं सकती थी! बड़बड़ा कर रह जाती। हार कर कहती, "मां-बाप तो औलाद से ही हार मानते हैं।" उधर गांव वाले घूरे को रांड का सांड कह कर संबोधित करते।

वह किसी से भी सीधे मुंह बात नहीं करता। गाली-गलौच चलती रहती। तू-तू, मैं-मैं होती रहती।

दिन निकलते गए। घूरे पूरी तरह जवान हो गया। पर उसकी शादी के लिए कोई पूछने वाला ही नहीं था। कोई आता, तो देखकर चला जाता। वापस लौटकर नहीं आता। घूरे के साथ की उम्र वालों के ब्याह-गौने हो गए। बच्चे हो गए। उसे यह बात अखरने लगी। उसकी मां इसी पीड़ा में घुलती रहती। यदि यही हाल रहा, तो कुंवारा रह जायेगा। काम करे न धाम, ठाली आठो याम।

घूरे की मां उसके निठल्लेपन से बहुत परेशान थी, उससे ज्यादा उसके बोलचाल के तरीके से। गाली तो उसकी जुबान पर सदा रहती। सोचता तो उल्टी बात ही सोचता। आए दिन नए-नए उलाहने सुनने को मिलते। बुढ़िया इन उलाहनों शिकायतों से तंग आ गई। घूरे को भी अब लगने लगा कि ऐसे पार नहीं पड़ेगी। कुछ काम तो करना ही पड़ेगा।

एक दिन उसने अपनी मां से बात की। खाने-कमाने के लिए जाने को कहा मां तो तैयार बैठी थी। मां ने मंगल गीत गाए। देव मनाए। घूरे को गठरियां बांध कर दे दी। घूरे को समझाया कि गठरिया में दाल चावल बांध दिया है। रास्ते में जहां भी ठहरना, वहां किसी से कहकर खिचड़ी बनवा लेना। जहां ठहरना, वहां मीठा बोलना।

अपनी मां की बात सुन-समझ कर घूरे चल दिया। बुढ़िया का हृदय भर आया। पर बेटे की खातिर उसने अपनी छाती को चौड़ा कर लिया।

घूरे को गांव छोड़ते समय काफी हिचकिचाहट-सी लगी। पर कोई दूसरा चारा भी नहीं था। धीरे-धीरे अनमने मन से वह चलता रहा, चलता रहा शाम तक चलते-चलते थक गया। आखिर में एक गांव दिखाई पड़ा, तो घूरे ने वहीं ठहरने का विचार किया।

गांव में एक बुढ़िया दिखाई दी। वह उसके द्वार पर पहुंचा। उसने मां की बात ध्यान में रखी। जाकर राम-राम की। बुढ़िया ने आशीर्वाद दिया। गांव का नाम पूछा। घूरे ने अपना पता बताया। उसके बाद खिचड़ी पकाने को कहा बुढ़िया ने हां कर ली। उसने अपनी पोटरी में से दाल-चावल निकाला

और बुढ़िया को दे दिया।

बुढ़िया खिचड़ी पकाने लगी। घूरे उसके पास बैठा बातचीत करता रहा ऊटपटांग सोचता रहा बुढ़िया से सवाल-जवाब करता रहा उसकी तगड़ी भैंस को देखकर बोला, "बुढ़िया मां, भैंस तो खूब मोटी है। ब्यायेगी क्या?"

"हां, बेटा।"

"जब इसके पेट में बच्चा बड़ा होयेगा तो और फूलेगी।"

"हां, हां, तुझे क्या है?"

"अरी मां, पेट ज्यादा फूल गया, तो दरवाजे में से कैसे निकलेगी? दरवाजा तुड़वाना पड़ेगा।" घूरे की बात बुढ़िया को तीर के समान लगी। पर उसने सुन ली। सोचा, थोड़ी देर की तो बात है। खिचड़ी खाकर चला जायेगा। बुढ़िया पकाती रही। घूरे ने बुढ़िया के बेटे की बहू को देखकर पूछा, "मां यह बेटे की बहू दीखे?"

"हां।"

"तेरा बेटा क्या करता है?"

"नौकरी।"

"कहां नौकरी करता है?"

"बिजली विभाग में।"

"राम-राम, राम-राम"

यह सुनते ही बुढ़िया ने घूरे से पूछा, "क्यों, क्या बात है?"

"अरी मां, तेरा बेटा बिजली के खम्भे पर चढ़ता होगा। किसी दिन बिजली के तारों से चिपक गया तो तेरी बहू विधवा हो जाएगी।"

यह सुनते ही बुढ़िया को आग-सी लग गई। उसने खिचड़ी उतार कर कहा, "ले अपनी खिचड़ी और भाग यहां से।" बुढ़िया ने खिचड़ी उसकी पोटली में डाल दी और डंडा दिखाकर उसे भगाने लगी। आगे-आगे खिचड़ी की पोटली लेकर घूरे भागा और पीछे-पीछे हाथ में डंडा लेकर बुढ़िया।

गांव के लोग इस तमाशे को देख रहे थे। बड़ा अचंभा कर रहे। घूरे की पोटली से पकी हुई खिचड़ी का रस टपक रहा था। गांव के बाहर उसे निकाल कर ही बुढ़िया ने दम लिया।

घूरे की पोटली में से रस टपकता रहा गलियों में लोगों ने पूछा, "भइया, पोटली में से क्या टपक रहा है?"

घूरे दुखी मन से बोला, "बोली का रस।"

❐❐❐

अशुभ मोहर

एक गांव में कोली व कोलन रहते थे। मेहनत मजदूरी करके पेट भरते थे। जब समय मिलता, तो तानाबाना लगाकर खद्दर बुन लेते। जो कुछ कमाते उसमें से कुछ बचा लेते। इस प्रकार उन्होंने कुछ धन जमा कर लिया।

एक दिन कोलन बोली, "मेरे पीहर में भाई के लड़के का ब्याह है। मुझे जाना पड़ेगा। मेरी और बहनें गहने पहन कर आयेंगी। मुझे भी कुछ गहने बनवा दो।" कोली बोला, "चलो, सोने की मोहर खरीद लाते हैं। जब ब्याह होगा तब गहने बनवा लेंगे।"

दोनों बाजार गए, जो कुछ जमा किया था, सबको ठिकाने लगा आए और घर में एक मोहर आ गई।

मोहर आ तो गई, पर दोनों की नींद हराम हो गई। कोई इसे ले नहीं जाए, इस चिंता में दोनों रात भर जागते। दोनों ने एक दिन तय किया कि एक साथ क्यों जगें? एक जगे, दूसरा सो जाए। बारी-बारी से वे सोते-जागते रहे। कुछ रातें ऐसे ही निकलीं। लेकिन इससे वे उकता गए।

एक दिन दोनों ने सलाह की—पड़ोस में ठाकुर साहब रहते हैं। उनके यहां तो बहुत मोहरें हैं। कई चौकीदार हैं। उनके यहां चोरी-चकारी का डर तो है नहीं। वहां मोहर रख आते हैं। यह बात पक्की हो गई।

कोली मोहर को लेकर ठाकुर साहब के पास पहुंचा। प्रार्थना की-ठाकुर साहब, आप हमारी एक मोहर रख लो। ठाकुर साहब ने पूछा-क्यों, यहां किसलिए रखने आया है?

कोली ने सच-सच बता दिया। ठाकुर साहब ने कहा—देख, उस कोठे में हमारी पांच मोहरें रखी हैं। वहीं तू भी रख जा।

कोली ने जाकर देखा, वास्तव में वहां पांच मोहरें रखी थीं। उसने अपनी मोहर वहीं रख दी और ठाकुर साहब को बताकर चला गया। समय बीतता गया। कुछ दिन पश्चात कोली की ससुराल से पत्र आया। साले के लड़के का ब्याह है। कोलन ने कहा—अपनी मोहर को ठाकुर साहब के यहां से ले आओ। उसे एक डोरे में पो लेंगे और अपना काम बन जाएगा।

कोली भागा-भागा ठाकुर साहब के यहां पहुंचा। ठाकुर

साहब सो रहे थे। बेचारा बैठा रहा जब वह जगे, तब कोली ने अपनी बात कही—ससुराल में ब्याह है, मोहर लेने आया हूह्य।

ठाकुर साहब बोले—जरूर ले जाओ, पर हम से क्या कहता है! जहां रख गया था, वहीं से उठा ले जा। जा कोठा खोल ले।

कोली ने कोठा खोला। वहां एक भी मोहर दिखाई नहीं दी। कोली धीरे से बोला—ठाकुर साहब, यहां तो एक भी मोहर नहीं है।

ठाकुर साहब बोले–ऐसा कैसे हो सकता है? यहां तो हमारी पांच मोहरें रखी थीं।

ठाकुर साहब उठे। उन्होंने खुद देखा। एक भी मोहर नहीं है। वे बोले–क्यों रे, तेरी मोहर अशुभ तो नहीं थी! ऐसा लगता है कि तेरी मोहर अशुभ थी, जो हमारी पांचों मोहरें भी गायब हो गईं।

कोली बोला- मुझे तो पता नहीं। कोलन से पूछ कर आता हूं।

वह उदास मन से कोलन के पास आया। उससे पूछा– अरी भाग्यवान, यह बता हमारी मोहर अशुभ तो नहीं थी।

क्यों, क्या हो गया? कोलन ने पूछा।

अरे, उनकी पांचों मोहरें ही नहीं मिल रही हैं। ठाकुर साहब कह रहे हैं कि हमारी मोहर अशुभ थी जो उनकी पांचों मोहरों को गायब कर ले गई ।

यह बात सुनकर कोलन रोने लगी। कोली भी रोने लगा। दोनों रोते रहे। उनको इस बात का दुख नहीं था कि उनकी मोहर चली गई। उन्हें तो ठाकुर साहब की पांच मोहरों के गायब हो जाने का डर था।

अंत में कोलन बोली–कोली राज ठाकुर साहब के पास जाओ और कह देना कि हमें पता नहीं कि हमारी मोहर अशुभ थी। यदि यह पता होता तो हम आपके यहां रखने नहीं आते। किसी तरह अपना पिण्ड छुड़ाओ।

कोली घबराता-घबराता ठाकुर साहब के पास पहुंचा। हाथ जोड़कर बोला–ठाकुर साहब, मांफ कर दो। हमें पता नहीं था कि हमारी मोहर अशुभ थी।

ठाकुर साहब गुर्राये। बोले–हमारा तो नुकसान कर दिया।

कोली ने हाथ जोड़े। पांव पकड़े। नाक रगड़ी। तब कहीं जाकर पिण्ड छूटा। गांठ की ठगा कर बुद्धू बना कोली वापस घर आया। कान पकड़े। सौगंध खाई। भूले बनिया भेड़ खाई, अब खाऊं तो राम दुहाई।

❐❐❐